नेहरू बाल पुस्तकालय

बबूल का भूत

गुरदयाल सिंह

चित्रांकन

दुर्गादत्त पांडेय

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

NATIONAL BOOK TRUST, INDIA

क्या तुम जानते हो कि 'थेह' किसे कहते हैं? पंजाब के लोग उस ऊंचे टीले को 'थेह' कहते हैं जहां सैकड़ों-हजारों साल पहले कोई गांव या कस्बा भूकंप, बाढ़ जैसी किसी विपत्ति के कारण मिट्टी के नीचे दब गया हो। ऐसे टीले के ऊपर टूटी-फूटी ईंटें, मिट्टी के बर्तनों की ठीकरियां आदि बिखरी रहती हैं। गांव या नगर के जो खंडहर वहां कभी थे वे तो रेत-मिट्टी के नीचे दब चुके होते हैं। ऐसी जगह को लोग अच्छा नहीं समझते। परंतु बच्चों के लिए ऐसी जगह बहुत लुभावनी होती है, जहां ढूंढ़ने से कभी-कभी पुराने सिक्के, पीतल-तांबे के कुछ टुकड़े आदि भी मिल जाते हैं।

हमारे गांव का एक ऐसा ही थेह गांव से थोड़ी दूर था छोटी नहर के पास। उसी के पास एक छोटा-सा तालाब था। तालाब इतना गहरा था कि यदि बरसात के बाद साल भर भी बारिश न हो तो भी इसमें कुछ न कुछ पानी जरूर बचा रहता था। इसीलिए वहां चरवाहे अपनी भेड़-बकरियों और गाय-भैंसों को पानी पिलाने के लिए ले जाया करते थे। परंतु और लोग इस तालाब के पास नहीं जाते थे। इसका कारण यह था कि हमारे गांव के लोग इस थेह से बहुत डरते थे। लोग, सूबेदार की हवेली को जैसे भूत-प्रेतों का घर मानते थे, उसी तरह थेहों, खंडहरों तथा बेकार पड़े कुओं तथा बावड़ियों में भी बुरी आत्माओं का बसेरा मानते थे।

केवल इतना ही नहीं, हमारे गांव के लोग ऐसी जगहों के आसपास के पेड़ों को भी अशुभ मानते थे। समझा जाता था कि ऐसे पेड़ों पर भी भूत-प्रेत रहा करते हैं। इसीलिए ऐसे कुछ वृक्षों का नाम हमारे लोगों ने 'पक्का पीपल', 'पक्की बेरी' तथा 'पक्का बड़' आदि रख छोड़े थे। ऐसे पेड़ों से हम बच्चे इतना डरा करते कि वहां जाने का साहस न कर पाते थे ('पक्का' का अर्थ होता था कि उस पेड़ के ऊपर कोई भूत-प्रेत रहता है, जिसके पास जाना घातक हो सकता है)।

ऐसा ही एक 'पक्का पीपल' उस थेह तथा तालाब के पास था। यह पीपल बहुत ऊंचा तथा फैला हुआ था। हम जब भी उधर ढोर चराने जाया करते तो मेरी मां हमें बार-बार चेतावनी देती। कहा करती, ''बेटा, उस पीपल के पास मत जाना। वहां कितनी ही गाय-भैंसें मर चुकी हैं। वह पक्का पीपल है!''

परंतु एक दिन घुदू ने कहा, ''आज तो उसी पीपल के नीचे ही चलेंगे।''

मैंने डरकर कहा, ''नहीं भाई। मेरी मां तो रोज डांटती है कि उधर मत जाना।''

''अरे चाची को क्या पता है बाहर की दुनिया का।''

मैंने फिर कहा, ''भाई मेरे, जब सारा गांव कहता है तो कुछ न कुछ तो बात होगी ही। नहीं?''

घुदू गुस्से में आ गया और ऊंची आवाज में बोला, ''अबे उल्लू! सूबेदार की हवेली में भी तो भूत-प्रेत होने की बात सारे गांव के लोग कहते थे, वहां कौन-सा भूत मिला! बता? उलटा हम ही वहां जाकर भूत-प्रेत बन गये। बने कि नहीं?''

उसकी बातें मुझे तो ठीक लगतीं, परंतु मां को कौन समझाए। मैंने कहा, ''वहां

हमारा जाना बहुत जरूरी है क्या?" मैंने डरते-झिझकते हुए कहा, "क्या वहां जाए बिना हमारा गुजारा नहीं होगा जाना इतना जरूरी है क्या?"

वह बोला, "हां जरूरी है। तू वहां जाकर जब तक अपनी आंखों से नहीं देखेगा तो विश्वास कैसे करेगा? न जाने से तो सारी जिंदगी ऐसी फिजूल की बातों से डरते हुए गीदड़ ही बना रहेगा। सच-झूट का क्या पता चलेगा! तू ही बता?"
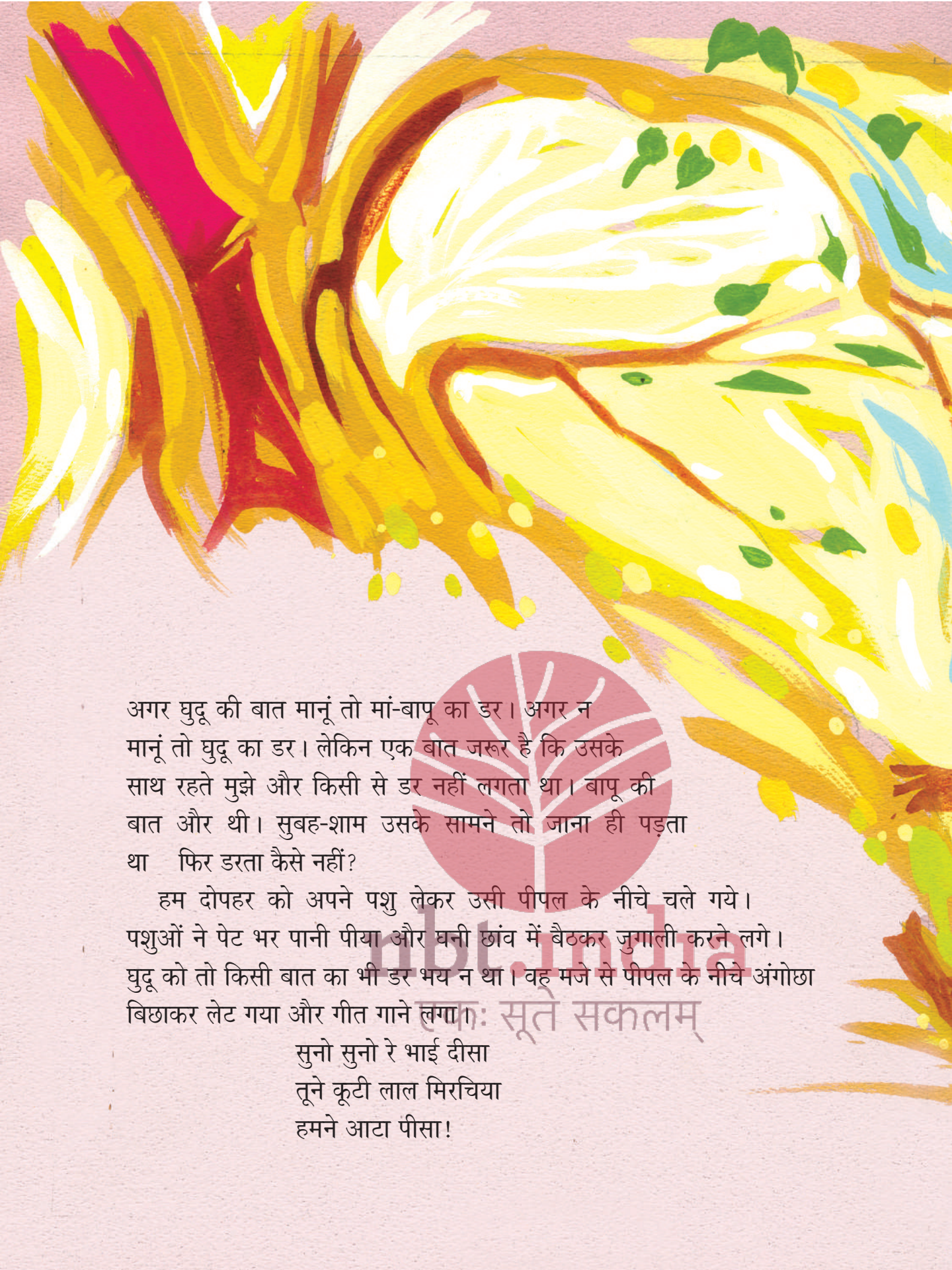
मुझे भी थोड़ा गुस्सा आ गया। मैंने कहा, "तू कहां का शेर है?"

"अबे शेर न सही, तेरी तरह चिड़िया के बच्चे जितना दिल तो फिर भी नहीं है मेरा। और मैं तो ऐसी बातों के बारे में बस अपने गुरु, संतोखे भाई जी की बात ही मानता हूं।"

"वह कौन-सी?" मैंने पूछा। वह बोला, "संतोखा कहा करता है 'जब तक न देखूं अपने नैना, तब तक न मानूं गुरु का कहना।' बात आ गयी मेरी समझ में!"

बात तो मेरी समझ में आ जाया करती, परंतु दोनों ओर से डर भी लगा रहता।

अगर घुदू की बात मानूं तो मां-बापू का डर। अगर न मानूं तो घुदू का डर। लेकिन एक बात जरूर है कि उसके साथ रहते मुझे और किसी से डर नहीं लगता था। बापू की बात और थी। सुबह-शाम उसके सामने तो जाना ही पड़ता था फिर डरता कैसे नहीं?

हम दोपहर को अपने पशु लेकर उसी पीपल के नीचे चले गये। पशुओं ने पेट भर पानी पीया और घनी छांव में बैठकर जुगाली करने लगे। घुदू को तो किसी बात का भी डर भय न था। वह मजे से पीपल के नीचे अंगोछा बिछाकर लेट गया और गीत गाने लगा।

सुनो सुनो रे भाई दीसा
तूने कूटी लाल मिरचिया
हमने आटा पीसा!
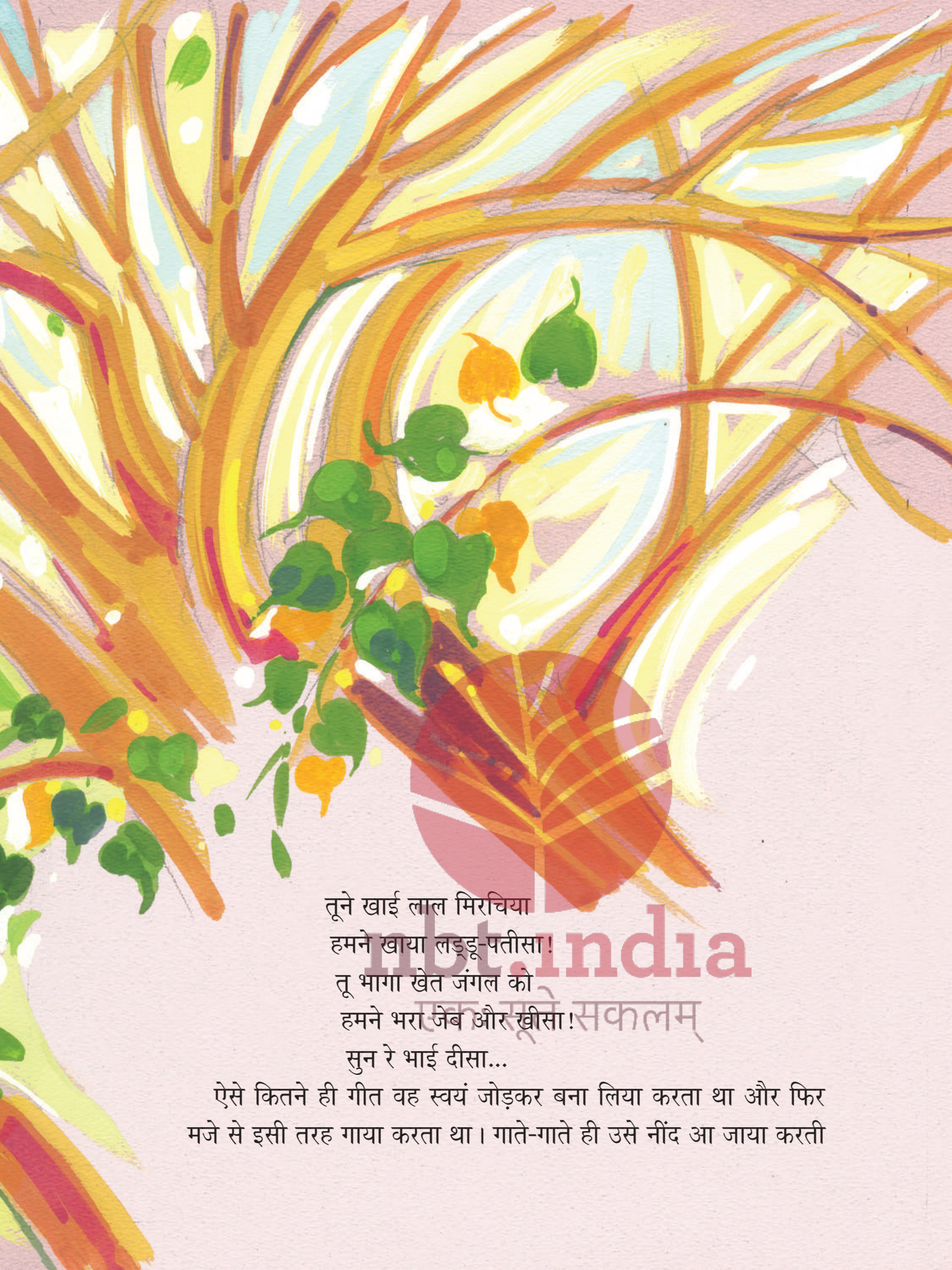
तूने खाई लाल मिरचिया
हमने खाया लड्डू-पतीसा!
तू भागा खेत जंगल को
हमने भरा जेब और खीसा!
सुन रे भाई दीसा...

ऐसे कितने ही गीत वह स्वयं जोड़कर बना लिया करता था और फिर मजे से इसी तरह गाया करता था। गाते-गाते ही उसे नींद आ जाया करती

थी। आज भी कुछ क्षण बाद वह तो सो गया, परंतु मुझे नींद नहीं आई। मैं बहुत ध्यान से आसपास तथा पीपल के ऊपर, पत्तों के बीच, बार-बार देखता रहा कि कहीं सचमूच ही कोई भूत-प्रेत तो नहीं है। लेकिन वहां कुछ भी दिखाई नहीं दिया।

फिर कुछ देर बाद घुदू जाग गया। उसने लेटे-लेटे ही पीपल के घने पत्तों, टहनियों की ओर घूरते कहा, "अरे बाप रे! पीपल को ही जला दिया इसने तो! भागो-भागो!" और वह उठकर थोड़ा भागा भी। मैंने भी डरकर उसके साथ भागते हुए पूछा, "अरे कहां? किसने, किसे जला दिया? तू कह क्या रहा है? बता तो!"

फिर रुककर उसी तरह आंखें फैलाए, ऊपर की ओर इशारा करते हुए उसने कहा, ''वह देख, आग लगी है। लपटें निकल रही हैं...और...''

उसका भयभीत चेहरा देखकर मेरा तो पसीना छूटने लगा। फटी-फटी आंखों से जिधर वह देख रहा था, मैंने भी देखा तो तो वहां सचमुच ही आग की लपटें दिखाई दीं। मेरा चेहरा तो एकदम फक्क पड़ गया। परंतु तभी वह ठहाका मारकर हंस दिया।

''तुझे क्या हुआ है बे?'' मैंने गुस्से और डर से पूछा।

क्षण भर तो मुझे यह भी चिंता होने लगी कि कहीं किसी भूत-प्रेत की छाया तो उसके ऊपर नहीं पड़ गयी जिसके कारण वह पागल हो गया हो?

परंतु तभी वह हंसी रोकते हुए बोला, ''पता चला कि गीदड़ कौन है और शेर कौन?''

''क्या मतलब है तेरा?''

''मतलब सिर्फ इतना है कि मैं तुझे यही बताना चाहता था कि तू कितना बहादुर है। अरे उल्लू! जिसे तू आग समझ रहा है वह तो पत्तों में दिखाई दे रही सूरज की धूप की चमक है। थोड़ी आंखें खोलकर तो देख कि वहां क्या है।''

जब मैंने ध्यान से देखा तो मुझे बहुत शर्म आई कि केवल उसके 'आग-आग' कहने से ही मैं क्यों डर गया था। ज्यादा शर्म मुझे इसी बात पर आ रही थी कि मैं सचमुच डरपोक हूं जो बिना बात के ही डर गया। इधर मैं शर्म के मारे पानी-पानी
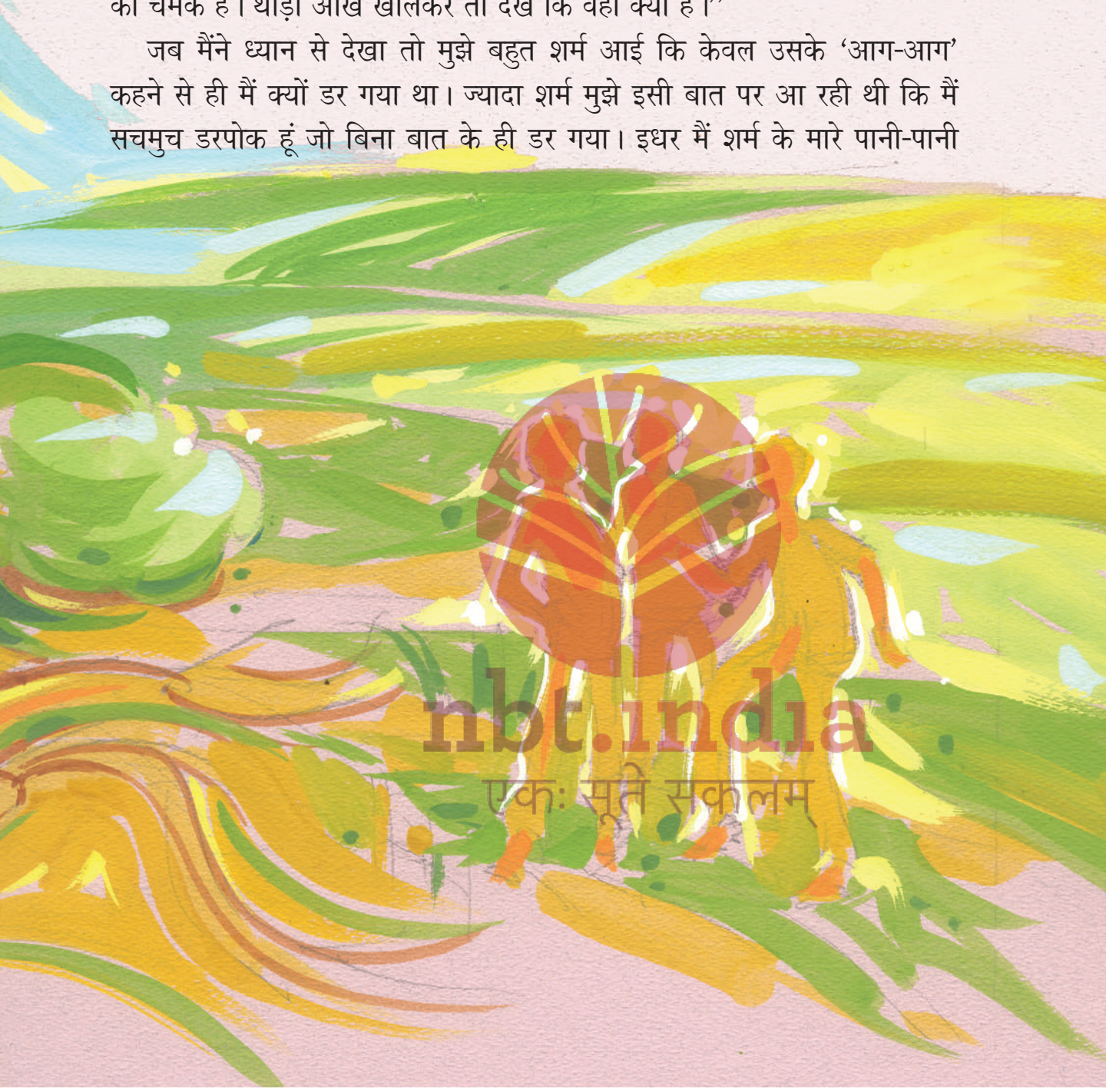
हो रहा था, परंतु उसी समय घुदू का शरारती दिमाग न जाने और कैसी-कैसी बातें सोच रहा था। तभी उसने पल भर के बाद चुटकी बजाकर उछलते हुए कहा, ''बन गयी बात! अब तू देखना हमारा करतब! हमारा जादू   बंगाल का जादू!''

मेरे बार-बार पूछने पर उसने मुझे अपनी नयी शरारत बता दी। मैं भी सुनकर बहुत खुश हुआ। जो कुछ उसने सोचा था, वह कमाल की बात थी। तुम्हें भी यह जानने की उत्सुकता तो जरूर होगी। परंतु बच्चो! ऐसे भेद बता देने से तो कहानी का मजा ही नहीं रहेगा। थोड़ा इंतजार करो, फिर स्वयं ही जान जाओगे कि घुदू ने मुझे कौन-सी शरारत बताई थी।

उसी दिन शाम को हम तीन लोग बाहर एक खेत में मिले। तीन, अर्थात घुदू, लंबू और मैं। वहां हमने तीन 'भूत की पूंछें' बनाईं। तुम कहोगे कि यह 'भूत की पूंछ' भला क्या चीज हुई? सचमुच ही कोई खास चीज होगी। परंतु ऐसी बात नहीं है। यह तो मामूली सी बात थी। ऐसी पूंछें बनाने के लिए घुदू अपने घर से कपड़े की सिली हुई तीन रस्सियां ले आया था। ये एक उंगली भर चौड़ी थीं और दो-दो, तीन-तीन गज लंबी। कपड़े की सिली होने के कारण ये भीतर से खाली थीं। इनके भीतर 'मसाला' भरने के लिए पहले हमने कुछ कपास की जड़ें और टहनियां जलाकर उनकी राख बना ली। और इस राख से तीनों रस्सियां ठूंस-ठूंसकर भर दीं। फिर तीन-तीन उंगली की दूरी पर कसकर मोटे धागे बांध दिए। इससे सारी रस्सी में ही हर तीन उंगली की दूरी पर गांठें बंध गयीं। बस यही राख से भरी, कपड़े की

सिली तीन रस्सियां हमारी भूत की पूंछें थीं।

उसके बाद मैं और लंबू तो गांव की ओर भाग आये और घुदू नहर की ओर चला गया। हम दोनों ने गांव में आकर शोर मचा दिया कि छोटी नहर के पुल से थोड़ी दूर जो बूढ़ा कीकर (बबूल) है उसके ऊपर हमने भूत देखे हैं। सभी लोग हमारा मजाक उड़ाने लगे। हमें घूरने और डांटने लगे। यदि हम यही बात थेह वाले पीपल के बारे में कहते तो लोग मान भी जाते। परंतु जिस बबूल की हम बात कर रहे थे, वहां तो कभी किसी ने किसी भूत-प्रेत के बारे में कुछ भी न सुना था। और फिर लोगों का यह भी विश्वास था कि भूत-प्रेत तो केवल कुछ विशेष पेड़ों पर ही रहते हैं, बबूल जैसे कंटीले पेड़ पर तो वे बिलकुल नहीं रह सकते।

जब हम शोर मचा रहे थे और पंद्रह-बीस लड़के हमारे आप-पास इकट्ठे हो गये तो अचानक हमारे गांव का नंबरदार खेता भी आ गया। उसने मेरा कान पकड़कर कहा, "अरे बंदरी के बच्चे! क्या बकवास करता है। चल मेरे साथ। अगर बबूल पर कोई भूत-प्रेत न हुआ तो उसी बबूल के साथ तुम्हें बांध दूंगा जहां बड़ी चींटियां तुझे नोच-नोचकर खा जायेंगी। तभी तुझे पता चलेगा कि वहां कौन-सा भूत-प्रेत रहता है!"

हमें तो सारी बात का पता था। मैंने बांह छुड़वाते हुए दृढ़ता से कहा, ''अच्छा चाचा, अभी चलो हमारे साथ। अगर वहां भूत हुए तो फिर हमें क्या दोगे?''

खेता नंबरदार बोला, ''कल तुम सभी को गुड़ में बने चावल खिलाऊंगा भरपेट। मजे से खाना।''

मैंने छाती ठोंकते हुए कहा, ''तो अभी हमारे साथ चलो!''

वह भी बहुत अजीब आदमी था। उसी समय साथ हो लिया। बीस-पच्चीस लड़कों तथा नंबरदार के साथ दो-तीन और आदमी भी हमारे साथ चल दिए। मैं और लंबू आगे-आगे थे और वे सभी हमारे पीछे आ रहे थे। पूरा एक जुलूस बन गया। परंतु जब तक हम बबूल के कुछ पास तक पहुंचे, तब तक सांझ भी घिर आई। अंधेरा
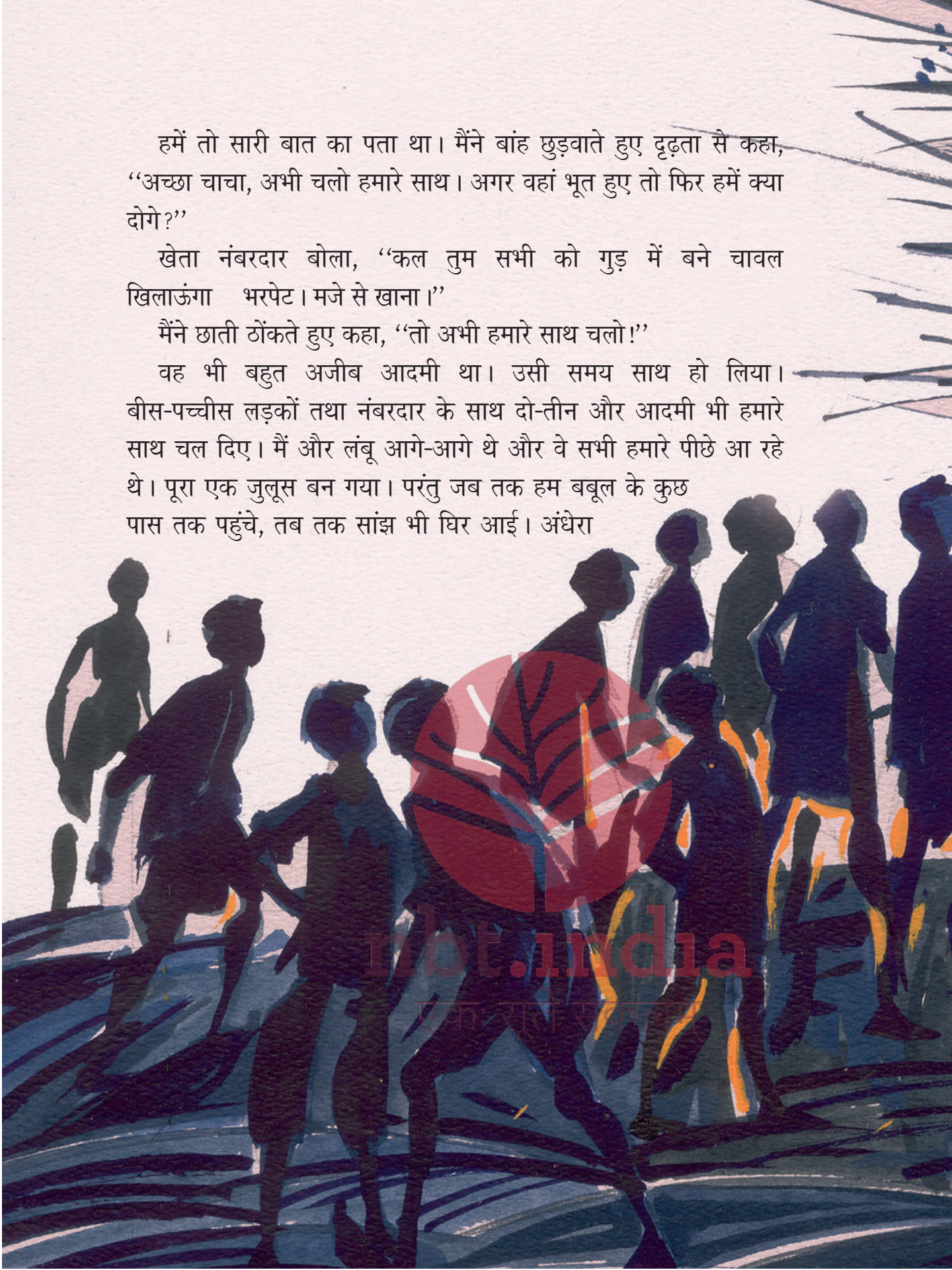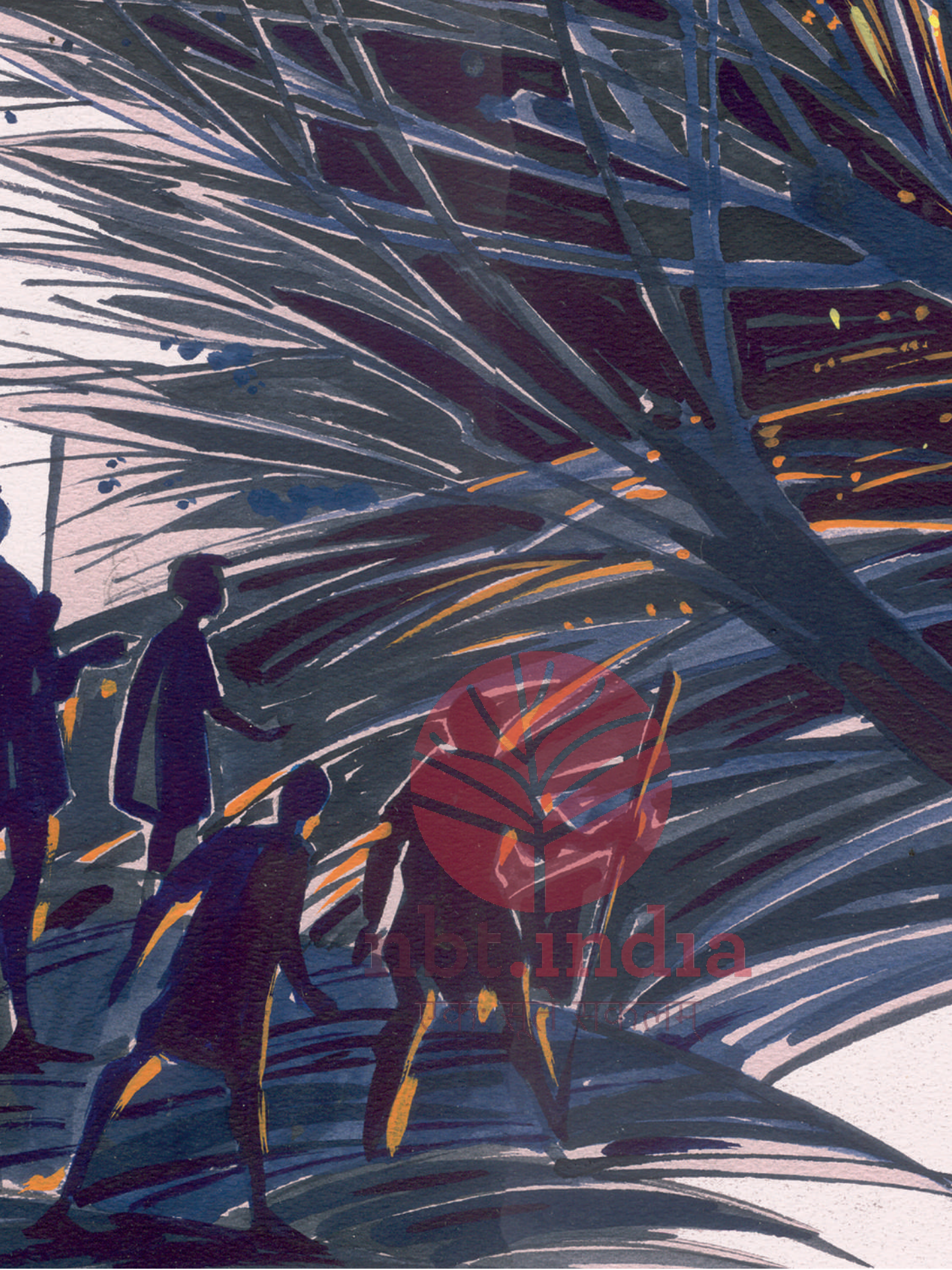
होने लगा था और कोई-कोई तारा भी चमकने लगा था। जिस रास्ते से हम जा रहे थे उससे केवल सौ-डेढ़ सौ गज की दूरी पर ही वह बबूल होगा। जब लंबू, अपने जिम्मे लगे काम के लिए तैयार हो गया तो मैंने उनका हाथ पकड़कर दबा दिया। उसी समय वह जोर से चीखें मारकर पीछे गांव की ओर भागने लगा, और जोर-जोर से चिल्लाने लगा।

"खा-खा-खा-ग-या ले!...मा-ल दिया ले... भू-भू...त आया ले...आया ले!..."

जोर-जोर से चीखते हुए वह बीस-तीस कदम भागकर गिर पड़ा। मेरी हंसी निकलने को हुई जिसे मैंने बड़ी मुश्किल से रोका। लंबू जो
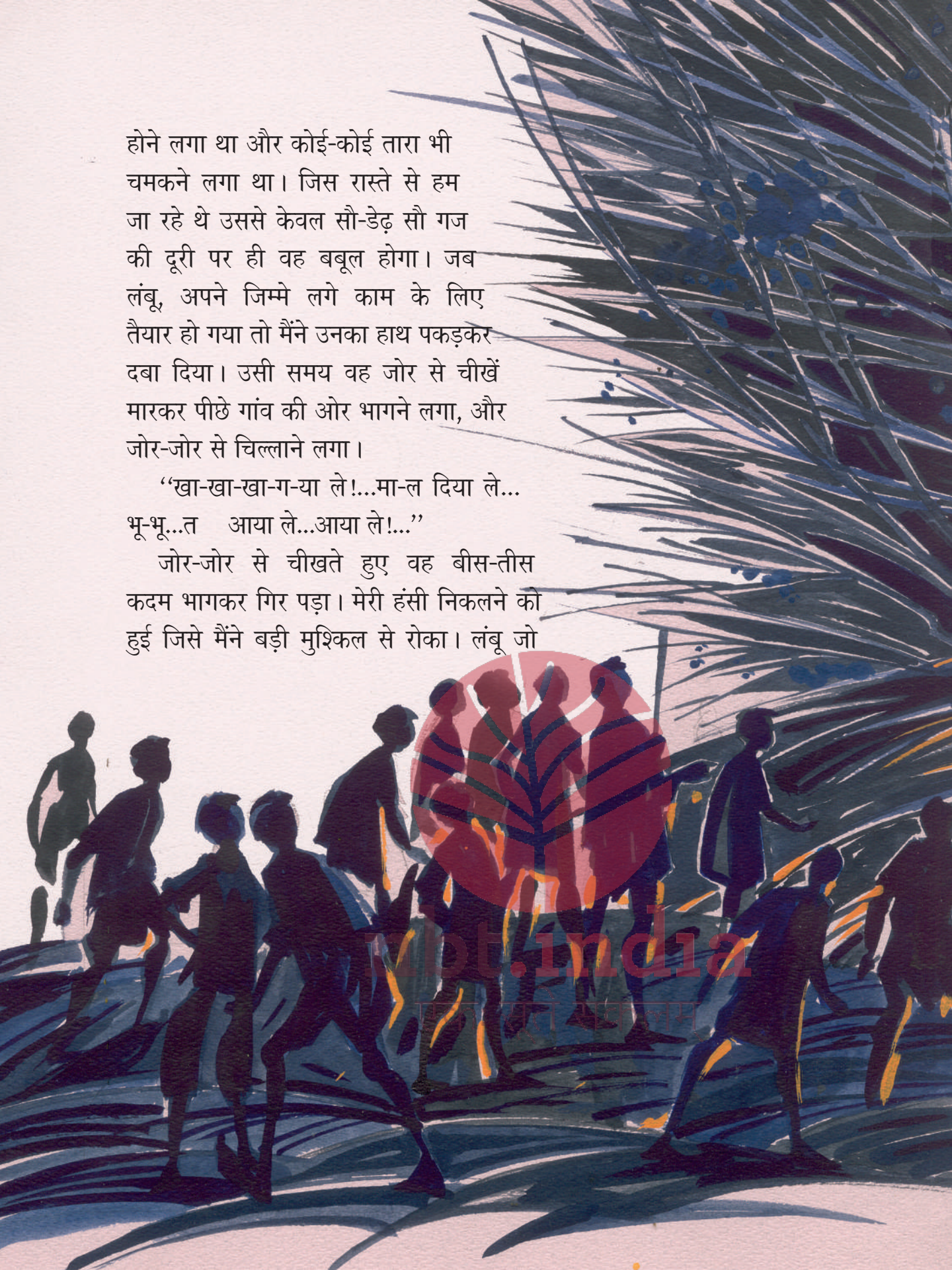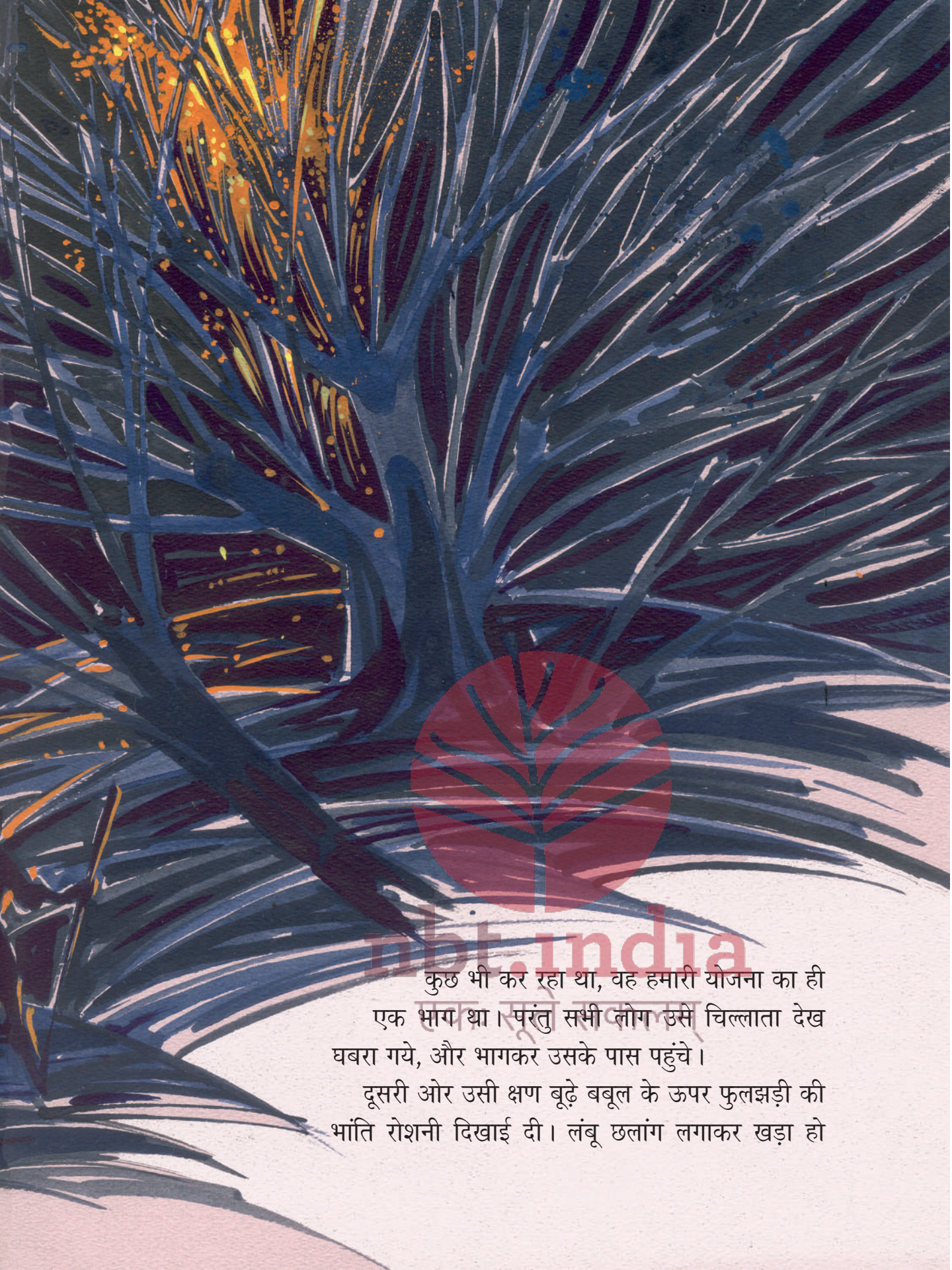
कुछ भी कर रहा था, वह हमारी योजना का ही एक भाग था। परंतु सभी लोग उसे चिल्लाता देख घबरा गये, और भागकर उसके पास पहुंचे।

दूसरी ओर उसी क्षण बूढ़े बबूल के ऊपर फुलझड़ी की भांति रोशनी दिखाई दी। लंबू छलांग लगाकर खड़ा हो

गया और फिर चिल्लाया, ''व-ह-आ आ-आयी.
..भू ऊ ऊ ऊ त! भू-त!''

तभी मैंने भी कहा, ''वह देखो!...देखो चाचा! देखो भूत की करतूत! देख रहे हो न! अब बताओ?''

सभी भौंचक्के रह गये।

बबूल की टहनियों के भीतर फिर चिंगारियां छूटने लगीं और झट से बुझ गयीं। कुछ क्षण बाद चिंगारियां फिर फूटीं तो लंबू फिर शोर मचाने लगा ताकि सभी का बबूल पर भूत होने का भ्रम पक्का हो जाये।

कुछ क्षण बाद चाचा खेता बोला, ''अरे छोकरो, बात तो तुम्हारी ठीक लगती है। यह तो सचमुच किसी भूत-प्रेत की ही करतूत लगती है।''

उसके ऐसा मान लेने से हमारी आयु के सभी लड़के तो गांव की ओर खिसकने लगे। थोड़ी दूर जाकर कुछ तो मारे डर के भागने भी लगे। मैं और लंबू भी झूठमूठ का ही भय दिखाते गांव की ओर भाग आये।

लेकिन दो-तीन घंटे के बाद जब हम तीनों घुदू के पशुओं वाले बाड़े में बैठकर हंसते हुए बातें कर रहे थे। तभी घुदू बोला, ''अब मेरे से बचकर रहना! अब मैं बूढ़े बबूल का भूत हूं!''

हम तीनों बहुत हंसे।

बच्चो! अब तुम समझ गये होगे कि हम तीनों ने कैसी योजना बनाई थी। यह योजना भी घुदू के दिमाग की ही देन थी। वह राख से भरी कपड़े की

वे रस्सियां लेकर बूढ़े बबूल के ऊपर जा छुपा था और रस्सियां बबूल की टहनियां से बांधकर लटका दी थीं।

इधर हम दोनों योजनानुसार लड़कों तथा कुछ आदमियों को इकट्ठा करके बबूल के पास तक ले आये थे। लंबू भी हमारी योजना के अनुसार ही चीखते हुए गांव की ओर भागा था। उसकी चीख घुदू को यह बताने के लिए इशारा भर थी कि हम लड़कों तथा लोगों को ले आये हैं और वह अपना काम आरंभ करे। और घुदू ने लंबू की चीख सुनते ही उन रस्सियों के नीचे के हिस्सों को आग लगा दी थी। ये तीनों रस्सियां बारी-बारी जलने लगी थीं। जब रस्सी की एक गांठ पर बंधा धागा जल जाता तो गांठ में भरी राख जलती हुई नीचे धरती की ओर गिरती थी। ये चिंगानियां बहुत भयानक लगती थीं। और जैसे-जैसे गांठों वाले धागे जल रहे थे, ये चिंगारियां भी रह-रहकर गिरती जा रही थीं।

बस यह हमारे घुदू 'भूत' की करामात थी। अंधेरा होने के कारण न तो कीकर पर चढ़ा घुदू ही किसी को दिखाई दे रहा था और न ही वे रस्सियां दिखाई दे रही थीं। इसी कारण लोग समझते रहे कि यह किसी भूत-प्रेत की ही करतूत है। फिर हमारे साथ गये लड़कों, खेते नंबरदार तथा दूसरे आदमियों ने सारे गांव में यह खबर जंगल की आग की तरह फैला दी। रस्सियां देर रात तक जलती रहीं। इसी कारण सारे गांव ने ये गिरती चिंगारियां देखी थीं। सभी को विश्वास हो गया था कि बबूल पर जरूर कोई भूत रहता है।

सब से अजीब बात तो यह हुई कि कोई भी हमारी शरारत का भेद नहीं जान पाया। कई दिन तक लोग उस बबूल के पास फटकने का भी साहस न कर सके और सभी जगह भूतों की बातें होने लगीं।

लेकिन कुछ दिन बाद ही हमारे दोस्त लंबू ने यह भेद अपने एक और दोस्त को बता दिया। उसकी यह आदत थी कि अधिक समय तक ऐसी बातें मन में छुपाकर नहीं रख पाता था। जिस दिन उसने यह भेद बताया, उसी दिन से लोग हमें गांव के सबसे शरारती लड़के समझने लगे। घर में हमारी पिटाई भी हुई। परंतु हमने कोई परवाह नहीं की। ऐसी पिटाई तो हमारे घरों में होती ही रहती थी।

बच्चो! तब से आज तक हमारे गांव के लोग उस बूढ़े बबूल को 'बूढ़ी कीकर'

कहना छोड़कर 'तिगड़ी कीकर' कहते आ रहे हैं। यह नाम लोगों ने हम तीनों के मिलकर योजना बनाने के कारण रखा। अब यह बबूल का पेड़ सचमुच ही बूढ़ा हो चुका है। अनेक डालें और टहनियां टूट गयी हैं। कितनी ही टहनियां सूख गयी हैं। परंतु अब भी लोग इसे बूढ़ी कीकर कहने को तैयार नहीं। 'तिगड़ी कीकर' ही कहते हैं। देखा हमारा जादू!

विबा प्रेस प्रा.लि., नई दिल्ली द्वारा मुद्रित